ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO.- 305-309
ISSN NO.-2347-2944
Vol.-9, No.-II, Issues-10 YEAR- Dec -2018

प्रेम में प्रयोग और चुनौतियां

प्रियेश कुमार तिवारी
शोध अध्येता– हिन्दी विभाग, अवधेश प्रताप सिंह विश्व विद्यालय, रीवा, (म0प्र0) भारत

Received- 13.11.2018, Revised- 17.11.2018, Accepted - 21.11.2018 E-mail: aaryvart2013@gmail.com

सारांश : ***कसौटी पर कलम– प्रेम एक ऐसा कालजयी शब्द है जो हर देश काल में अपनी सुखद अनुभूतियों के साथ मन को हौल से गुदगुदा देता है। प्रेम का यह तंतु जितना सुकोमल होता है उसकी उलझनें उतने ही गहरे उलझाती हैं। इस उलझन में यदि कभी कोई तीसरा उलझ आए तो फिर प्रेम का यह 'सूधो सनेह को मारग' न तो सीधा रह जाता है और न प्रेम में पगा। यदि बदकिस्मती से कोई इस प्रेम त्रिकोण में उलझ जाए तो भावों के शून्य और सपाट हुए बिना इन उलझनों से बाहर निकलना संभव नहीं। प्रेम की इन्हीं उलझनों को रेशा–रेशा कर सुलझाती हैं मन्नू जी की प्रेम कहानियां। उनकी कहानियों में प्रेम है, प्रेम त्रिकोण है और प्रेम में उलझे मन का पूरा–पूरा मनोविज्ञान भी। मन्नू जी अपनी प्रेम कहानियों के जरिए प्रेम के उसी मनोविज्ञान को थोड़ा–थोड़ा कर खोलती जाती हैं।***

कुंजीभूत शब्द– कसौटी, कालजयी, सुखद अनुभूतियों, सुकोमल, बदकिस्मती, त्रिकोण, सपाट, मनोविज्ञान।

मन्नू जी की प्रेम कहानियों की स्त्री प्रेम में छली गई अथवा हर बार छल के उस पार खड़ी स्त्री है ऐसा नहीं है, वह कभी इस ओर है तो कभी उस ओर भी. कभी पत्नी है तो कभी प्रेमिका भी। मन्नू जी की कहानियों की मुख्य पात्र विवाह के आर–पार की दोनों भूमिकाओं में जीने वाली आधुनिक स्त्रियां हैं। वे अपना निर्णय लेने के लिए, अपने तरीके का जीवन जीने के लिए पूरी तरह से स्वतंत्र हैं। पूर्ण स्वतंत्रता के साथ समाज में एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त इन स्त्री पात्रों की सारी लड़ाई अपने प्रेम–संबंधों में अपने आप से है। मन्नू जी की प्रेम कहानियों में 'यही सच है' कहानी की दीपा, 'ऊंचाई' कहानी की शिवानी, 'एक बार और' कहानी की बिन्नी, 'स्त्री सुबोधिनी' की 'मैं', 'बंद दराजों का साथ' की मंजरी जैसे पात्रों के जरिए स्त्री को पूरा–पूरा समझने का प्रयास है। लेकिन आश्चर्य यह कि दीपा, शिवानी, बिन्नी, मंजरी और शिंदे की प्रेमिका के रूप में वह जिस भी ओर खड़ी है, कुछ अधूरी–सी है। उसके मन का कोई न कोई कोना रिक्त है और यही रिक्त कोना इन कहानियों का सबसे जरूरी हिस्सा है जिनके इर्द–गिर्द ये कहानियां घूम रही हैं। स्त्री मन का यह कोना यदि रिक्त न रहा होता तो शायद ही प्रेम कहानियां बुनी ही न गई होतीं।

स्त्री अपने मन के उस रिक्त हिस्से को अनावश्यक मानकर अक्सर ही ढांक देती है। उनकी किसी से चर्चा भी नही करती। ऐसे में मन्नू जी की कहानियां उन्हीं अनपेछित सवालों को उधेड़कर उनका रेशा–रेशा अलग कर सामने रख देती हैं ताकि उनपर विचार किया जा सके, यह समझा जाए कि जो सवाल इतने अनावश्यक बने रहे वे आखिरकार जरूरी हैं भी अथवा नहीं ? मन्नू जी की प्रेम कहानियां मनोभावों के अपार संवेगों को उनके वास्तविक चेहरों के साथ प्रकट करने वाली मनोवैज्ञानिक कहानियां हैं। यह प्रेम में व्यक्ति मन के सहज भावों को टटोलती है और उन्हें साहस के साथ प्रस्तुत करती हैं। इसमें आदर्श होने या आदर्शवादिता दर्शाने का छलावा नहीं है। लेखिका इन प्रेम कहानियों के पात्रों में गुंथी हुई होने के साथ इनसे मुक्त भी है। इन कहानियों में वर्णित स्थितियां सामान्य लगते हुए भी सहज नहीं है। इनमे नायिका के मानस में उठने वाले अबाध भाव संवेगों को सहेज पाने के लिए अपार साहस की आवश्यकता है। वेग से फूटने वाले अबाध भाव प्रवाहों को संभालने के लिए शंकर–सी जटा की जरुरत है। मन्नू जी ने उसी साहस के साथ उठते–गिरते मनोभावों को सहेजकर शब्द दर शब्द संवादों में उतारने का काम सहज ही कर दिया है। प्रेम त्रिकोण लगभग हर कहानी में है. तीनों बिंदु समान होने के बाद भी एक ही बिंदु केंद्र की तरह उभरता है। वह अन्य दोनों बिन्दुओं तक जाकर उन्हें स्पर्श करके लौटता है लेकिन दूसरे दोनों बिन्दुओं की कोई कड़ी एक–दूसरे से सीधे–सीधे नहीं टकराती। टकराहट केवल उस एक के भीतर केवल और केवल अपने आपसे है।

'ऊंचाई' कहानी की शिवानी, शिशिर और अतुल का त्रिकोण इन सब में सबसे अनूठा है। सबसे अधिक ध्यान खींचने वाला शिवानी का संवाद कि 'मेरे लिए जैसे शिशिर वैसे तुम। मेरा कुछ भी मिटने वाला नहीं है इसलिए दे रही हूं।' चकित करता है कि क्या कुछ सालों तक पति के साथ रह लेने के बाद स्त्री अपने आप को इतना आदी बना देती है कि उसके लिए पति और प्रेमी के दो अलग इंसान होने का भेद ही खत्म हो जाता है ? या फिर मा बन जाने के साथ उसमे उदारता या ममत्व का भाव इस कदर भर जाता है की चाहे उसका अपना बच्चा भूख से कलपे या किसी और का वह दूध से चुचुआता स्तन उसके मुहं में डालकर उसकी भूख को शांत

हुआ देखना चाहती है।

शिशिर के यह पूछने पर कि यदि वह भी किसी दूसरी स्त्री से संबंध स्थापित कर ले तो क्या शिवानी बरदाश्त कर लेगी, जवाब में वह यह कहती है कि 'इसका उत्तर बहुत कुछ उस परिस्थिति पर निर्भर करता है कि जिसमें तुम उससे संबंध स्थापित करोगे। हां, फिर भी मैं इतना कह सकती हूं कि इस मामले में मैं बहुत संकीर्ण नहीं हूं और फिर तुम्हारे प्रति अपने आपसी संबंधो के प्रति आस्था भी इतनी कच्ची नहीं।' शिवानी का यह संवाद पति–पत्नी के संबंधों को किस हद तक सहज रख सकता है ? यह सवाल भी एक तरह की वैचारिक चुनौती है.

'यदि मैं जरा–सा देकर किसी के जीवन में पूर्णता ला सकती हूं, उसके अभावों को भर सकती हूं उसके सारे जीवन का रवैया बदल सकती हूं, तो उसे देने में क्या हर्ज है?' शिवानी का कहा गया यह वाक्य पति अथवा पत्नी दोनों में से किसी का भी हो सकता है लेकिन क्या कोई भी जीवन साथी विश्वास के इस रिश्ते में साझेदारी बर्दाश्त कर सकता है ? एक ओर शिवानी अपने प्रेमी को जरा–सा देने को सामान्य बात समझती है वहीं दूसरी ओर 'एक बार और' कहानी की मधु अपने पति से साफ कह देती है कि 'तुमने विवाह से पहले बता दिया होता कि तुम किसी और के साथ वचनबध्द हो तो मैं कभी तुम दोनों के बीच नहीं आती। किसी और का अधिकार छिनने की मेरी आदत नहीं पर जो अधिकार स्वेच्छा से तुमने दिया उसमें बंटवारा करना भी मेरे लिए संभव नहीं।' यहां किसी पात्र की किसी दूसरे पात्र से तुलना नहीं है लेकिन इन समस्त पात्रों के जरिए विभिन्न स्थितियों और उनसे होने वाली उलझनों को दर्शाने का जो प्रयास हुआ है वह भीं सामान्य नहीं है।

प्रेम में दो राहों पर कदम रखकर दोनों राहों में समानांतर महसूस होने वाली अनुभूतियों की इस प्रकार की स्वीकारोक्ति जैसी कि इन प्रेम कहानियों में वर्णित है, एक असाधारण अभिव्यक्ति है। संवाद भले ही पात्रों के हों किंतु निष्पक्ष होकर अपने पात्रों से मन को खोलकर रख देने वाले संवाद बुलवा लेना भी कम साहसिक नहीं है। पुरुष जब किसी दूसरे से जुड़ता है तो वह पाने के भाव से जुड़ता है लेकिन यदि एक संबंध में जीने वाली स्त्री ऐसा कोई कदम उठाती है तो उसमें भी उसका उद्देश्य पाना नहीं बल्कि देकर किसी अधूरे इंसान को पूर्ण करने का हो सकता है। लेखिका का यह नजरिया संबंधों को फिजूल की उलझनों से निकालकर कितना आगे ले जाता है. फिर भी 'ऊंचाई' कहानी में प्रेमी को देहदान करके आई हुई पत्नी के साथ पति के संवाद और उन संवादों का अंत अस्वाभाविक ही लगता है। यकीन नहीं होता कि पति नामक जीव जो कि पत्नी के तन–मन से बाहर उसके विचारों तक पर अपना एकाधिकार रखने का नशा पाले रहता है वह पत्नी के केवल इस वाक्य से संतुष्ट हो जाए कि 'उन क्षणों में शरीर पर भले वह छाया रहा हो लेकिन मन पर केवल तुम छाए हुए थे।' यदि पति–पत्नी के प्रगाढ़ संबंधों में एक साथी को यह समझा पाना इतना सरल होता तो प्रेम और संबंधों में इस प्रकार का दायित्व भाव कभी असंभव ही न हुआ होता क्योंकि अतीत तो लगभग–लगभग हर किसी का होता ही है। कितना साहसिक सवाल उठाया है मन्नू जी ने इस कहानी में...! वो भी उस दौर में जब पति–पत्नी का संबंध प्रेम से अधिक पवित्रता का संबंध माना जाता रहा। ऐसे समाज को 'देने' का अर्थ समझाना लेखिका के लिए कितनी बड़ी चुनौती रही होगी ! सारे विरोधों को किनारे रखकर अपने समय और समाज की वास्तविकता को सामने रख देने की चुनौती लेखिका की परिपक्व सोच और समझ को उद्घाटित करती है।

मन्नू जी की कहानियों की स्त्री एक पूरी–पूरी स्त्री है। बाहर से भीतर तक पूरी. मन्नू जी ने किसी नारी पात्र के मन का कोई भी टुकड़ा कहीं किसी भी कहानी में छिपाया नहीं है। उन्होंने प्रेम कहानियों में जिस भी स्त्री चरित्र को उकेरा उसे भीतर–बाहर से उसके सारे शेड्स और मूड्स के साथ पूरा–पूरा उकेरा है।

'यही सच है' कहानी की दीपा पारिवारिक बंधनों से पूरी तरह से मुक्त है। उनका नया प्रेमी संजय हर तीसरे–चौथे दिन उसके घर आता है, उसके कमरे की फूलदानी में फूल सजाता है। उसके सजाए फूल हर दिन, हर क्षण दीपा के जीवन में संजय की उपस्थिति के एहसास को बनाये रखते हैं। दीपा को संजय का वह प्रेम प्राप्त है जिसे पाने के लिए पत्नियां और प्रेमिकाएं तरसती हैं। दीपा आजाद खयालों की नारी है। वह अपने जीवन में भी आजाद है। दो प्रेमियों के बीच रहे होने के कारण वह प्रेम के हर भाव से परिचित है। प्रेम और संबंधों की ऊहापोह से भली–भांति परिचित है। प्रेमी चाहे पहला हो या दूसरा प्रेम उसकी कमजोरी है। यह एक ऐसी ढलान है जिस पर से उसके भाव असंयत से लुढ़कते चले जाते हैं और वह अपने को रोक पाने में असमर्थ हो जाती है। यहां उसके दोनों प्रेमी उसके भावों के उन दो अंतिम छोरों के समान हैं जिस पर पहुंचकर उसके असंयत से बहते चले जा रहे भावों को ठहराव मिलता है। उस बिंदु पर पहुंचकर वह दूसरे छोर जिसकी ऊहापोह में वह उलझी हुई होती है, उसे पूरी तरह भुलाकर डूब जाती है। सामने खड़े प्रेमी में अपना ठहराव पाकर वह दूसरे को भूलने लगती है और इसी को अपना अंतिम निर्णय मानने लगती है। यहां ध्यान देने वाली बात यह है कि ठीक यही एहसास उसे दोनों प्रेमियों के सामने होने पर हो रहा होता है. वह किस प्रेमी को चाहती है और

किस प्रेमी के प्रेम को यह कहानी के अंत तक धीरे–धीरे स्पष्ट होता चला जाता है. कहानी में उलझ–सुलझ कर पाठक अंत तक यह समझ जाता है कि स्त्री के लिए प्रेम सर्वोपरि है।

अपने पहले प्यार से अपमानित होकर प्रेम के लिए सारी दुनिया की भर्त्सना, तिरस्कार, परिहास और दया का विष पी लेने के बाद वह संजय के साथ एक नए जीवन की शुरुआत करती है। उसकी नई शुरुआत इतनी आसान नहीं है. कहानी में एक जगह दीपा एक महत्वपूर्ण बात कहती है– 'जैसे ही जीवन को दूसरा आधार मिल जाता है, उन सबको भूलने में एक दिन भी नहीं लगता। फिर तो वह सब ऐसी बेवकूफी लगती है, जिस पर बैठकर घंटो हंसने की तबियत होती है। तब एकाएक ही इस बात का एहसास होता है कि ये सारे आंसू, ये सारी आहें उस प्रेमी के लिए नहीं थीं, वरन जीवन की उस रिक्तता और शून्यता के लिए थीं, जिसने जीवन को नीरस बनाकर बोझिल कर दिया।'

इन पंक्तियों में लेखिका ने पहले और दूसरे प्रेमी के बीच के गैप को भरते जाने की प्रेम की सहज प्रक्रिया को उद्घाटित किया है. दीपा स्वयं स्वीकार करती है कि संजय को पाते ही मैं निशीथ को भूल गई। दीपा संजय को अपने प्रेम, अपनी कोमल भावनाओं और भविष्य की अनेकानेक योजनाओं का केंद्र मानती है और यह भी कहती है कि संजय के साथ उसके प्रेम को परिपक्वता मिल गई है, उसका प्रेम गहरा और स्थायी हो गया है, लेकिन कुछ दिन बाद कलकत्ता में पूर्व प्रेमी निशीथ से मिलते ही उसका अंतर्मन पूरी तरह से बदल जाता है। संजय के साथ रहते हुए उसने उसी निशीथ को विश्वासघाती, नीच और जाने क्या–क्या कहा था. वही निशीथ जो दीपा की नजर में प्रेम को खिलवाड़ समझकर खेलता रहा लेकिन फिर उसी व्यक्ति के संपर्क में पहुंचकर उसका दिल पसीज उठता है। तीन दिनों के साथ में निशीथ की खामोशी दीपा को विचलित कर देती है रही सही कसर ट्रेन छुटते–छूटते हाथ पर हाथ रखकर की हुई हल्की– सी कसावट पूरी कर देती है। निशीथ के उस एक संपर्क से उठी आंधी में संजय के ढाई सालों का प्यार, उनके तोहफे, उसके द्वारा रजनीगंधा के फूल सब जड़ सहित उखड़ कर उड़ने लगते हैं। 'प्रथम प्रेम ही सच्चा प्रेम होता है. बाद में किया हुआ प्रेम तो अपने को भूलने का, भरमाने का प्रयास मात्र होता है।' कहानी का यह संवाद अपने आप में स्थिर होता चला जाता है। 'सोचती हूं, निशीथ के चले जाने के बाद मेरे जीवन में एक विराट शुन्यता आ गई थी, एक खोखलापन आ गया था, तुमने उसकी पूर्ति की। तुम पूरक थे, मैं गलती से तुम्हें प्रियतम समझ बैठी।' गनीमत है कि यह बात उसके अपने ही अंतर्मन में हो रही है। संजय से प्रकट रूप में नहीं। वही संजय जिसकी बाहों ने उसे दोनों बार अपना होने का एहसास कराया।

दीपा के मानस का अध्ययन करने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि युवा मन अपनी ही चाहत से प्रेम करता है। उसकी अपनी चाह को पूरा करने वाला व्यक्ति ही उसका प्रेमी बनने का अधिकारी हो जाता है और उसका मन बेवजह उसकी ओर बहने लगता है। एक ओर दीपा यह भी कहती है कि वह संजय से जल्द ही शादी करने वाली है दूसरी ओर इस बात पर कुढ़ती भी है कि क्यों नहीं निशीथ उसका हाथ पकड़ लेता, उसके कंधे पर हाथ रख देता ? उसके कुछ भी करने पर वह बुरा नहीं मानेगी लेकिन वह इस बात पर बुरा मान जाती है कि निशीथ ऐसा कुछ भी क्यों नहीं करता।

वह अपनी खोई हुई चाहत को फिर से चाहने लगती है और संजय के ढाई सालों के प्रेम को निशीथ के ढाई दिनों की मुलाकातों में भुला देती है। निशीथ को अपने जीवन का सच मानते हुए उसे एक पल के लिए भी संजय के दिए प्रेम की याद नहीं आती। निशीथ के पास पहुंचकर दीपा अपने में ही गुंथी हुई एक स्वार्थी इंसान लगने लगती है। उसका प्यार निराधार–सा डगमगाने वाला प्यार मालूम देता है। एक ऐसा प्यार जो पूर्ण रूप से कहीं नहीं है। जो शायद अपनी जड़ों से उखड़ जाने के बाद फिर कहीं का नहीं रहता। जिसे एक समय बाद यह खुद नहीं पता होता कि आखिर उसे कहां जाना है ? 'लगता है कि जैसे मेरी राहें भटक गई हैं, मंजिल खो गई है। मै स्वयं नहीं जानती, आखिर मुझे जाना कहां है।'

मन्नू जी की 'मेरी श्रेष्ठ प्रेम कहानियां' की भूमिका में कमलेश्वर जी एक जगह लिखते हैं कि 'मन्नू का प्रेम एक दस्तक है, एक आहट है जिससे कोई अछूता नहीं है उसे हर दिल ने सुना और महसूस किया है, समेटा है और अपनी व्यक्तिगत धरोहर की तरह सहेजा है। उनकी कहानियों में सबका संभावित, आंशिक और अनुपातिक सच मौजूद है, क्योंकि वे औरत के मानसिक, शारीरिक और सांस्कारिक सत्य का बहुत गहरा और दहक एहसास देती हैं।'

वास्तविक जीवन की कहानियां घर की चारदीवारी के भीतर रह रही स्त्री के भरे–पुरे होने का एहसास जरूर कराती हैं लेकिन मन्नू जी की कुछ कहानियों की स्त्री पात्र इस बात का एहसास दिलाती हैं कि हर बार हर परिवार में ऐसा ही हो यह जरुरी नहीं। 'बंद दराजों का साथ' कहानी की मंजरी हो या 'स्त्री सुबोधिनी' कहानी में शिंदे की पत्नी। स्त्री के जिस्म पर जमी चर्बी की तहें, सुंदर सजीले कपड़े अथवा घर की रंगीन दीवारें उसे कितना भी संपन्न दिखाने का प्रयास कर लें लेकिन भीतर से कहीं न कहीं वह रिक्त है। 'अधिकतर शादीशुदा औरतें ऐसी होती हैं जिन्हें अपने घर की दीवारों से बेशुमार लगाव होता है। इतना ज्यादा कि धीरे–धीरे उन दीवारों को ही अपने चरों ओर लपेट लेती हैं। फिर मान–अपमान के सारे हमले उनसे टकराकर बाहर ही ढेर हो जाते हैं और

वे उनसे बेअसर सती–साध्वी सी भीतर सुरक्षित बैठी रहती हैं।

विपिन के साथ अपनी नई–नई शादीशुदा जिंदगी में मंजरी भी जिस प्रेमसुख से अपने को संतुष्ट पाती है उसी सुख में कमरे में रखी मेज की एक बंद दराज दरार डाल जाती है। उस दराज के खुलते ही विपिन के साथ उसके सारे मधुर संबंध बेईमानी हो जाते हैं। मंजरी विपिन की नई नवेली ब्याहता है. पूरा देने और पूरा पाने के एहसास के बाद भी उस बंद दराज के राज ने उसे अधूरी कर दिया है। दूसरी ओर पत्नी और परिवार की लकदक के उस पार प्रेमिका के रूप में खड़ी 'स्त्री सुबोधिनी' की नायिका की दशा भी कोई बहुत ठीक नहीं है। शिंदे के साथ प्रेम–संबंधों में प्रेम के सारे क्रांतिकारी प्रयोग कर लेने के बाद भी हर पल रिक्त होते जाने के भाव से वह भरी हुई है। उसकी झोली में प्रेम है। तन–मन का पूरा–पूरा सुख देने वाला प्रेमी है लेकिन उस प्रेमी के अपना होने का विश्वास नहीं है। वह बंधन जो स्त्री को जकड़े रहने का विश्वास दिलाता है उससे मुक्त स्त्री भी प्रेम के घेरे में घिरी हुई होकर भी ठगा–सा महसूस करती है। संपूर्ण पाने की चाहत में कई बार वह अपने आपको खंड–खंड करती जाती है और कहीं किसी मोड़ पर यह पाती है कि वह खुद को कितने टुकडों में बांट चुकी है। जाने किस अतृप्त चाह की तलाश में पुरुष केवल अपने को ही हिस्सों में नहीं काटता बल्कि अपने साथ रह रही स्त्री ६ स्त्रियों को भी कई हिस्सों में काट जाता है।

'तू अभी भी समझती है कि तू उसे प्यार करती है या कि यह प्यार है जिसके जोर से तू खिंची हुई चली जाती है ? क्यों अपने को धोखा दे रही है, बिन्नी ? अब तेरे संबंध का आधार प्यार नहीं प्रेस्टिज है, कुचला हुआ आत्म–सम्मान।' यह वाक्य केवल बिन्नी के लिए नहीं है बल्कि उन समस्त प्रेमिकाओं के लिए भी है जो पुरुष मन की पूरी सच्चाई जान लेने पर भी उसे अपने से काटकर अलग नहीं कर पाती। शिंदे की प्रेमिका ने भी पूरे आठ साल तक की अखंड ज्योति जला लेने के बाद आखिरकार यह मान ही लिया कि किसी विवाहित पुरुष से प्रेम करना स्त्री की निरी मुर्खता है। यहां उसे लाख प्रयासों के बाद भी न तो अपना स्वीट होम मिल सकता है और न पति पर एकाधिकार।

प्रेम की चाहत, असुरक्षा का भाव और अकेलेपन की जकड़न से स्त्री अपने को जबतक काट नहीं लेती तब तक विपिन, अतुल, कुंज, शिंदे और निशीथ जैसे न जाने कितने ही पुरुष उसके जीवन में आकर उसे कई–कई हिस्सों में काटते रहेंगे। लेकिन फिर एक सवाल यह भी उठता है कि जीवनावश्यक इन इच्छाओं से कटकर वह बची भी कितनी रह पाएगी ? और यदि नहीं तो फिर क्या ऐसे ही उलझती–सुलझती रह जाएगी ? व्यक्ति हमेशा ही अपने पहले प्यार में लौटना चाहता है लेकिन एक बार विश्वास टूटने के बाद वह न खुद को उससे जोड़ ही पता है न पूरी तरह अलग कर पाता है। न कहीं बंधा रह पता है न कहीं से मुक्त हो पता है। अंततः जिंदगी को यूं ही टुकड़ों–टुकड़ों में जीता चला जाता है, फिर भी सोचने वाली बात है कि जितनी सफाई से मधु को चुनते हुए कुंज ने बिन्नी को झटक दिया उतनी सफाई से संजय को पा लेने के बाद दीपा अतुल को क्यों नहीं झटक पाई ? चोट तो दोनों को एक बराबर लगी थी अंतराल भी दोनों के रिश्तों के बीच लगभग तीन साल का ही रहा लेकिन राह चुनने में कुंज, कुशल और दीपा कमजोर क्यों हो गई ? कुंज और दीपा लगभग एक ही मोड़ पर खड़े हैं. कुंज बिन्नी से दूर होकर मधु से जुड़ चुका है और अब मधु अर्थात दूसरे प्यार के साथ ही रहना चाहता है और दीपा पहले प्यार से चोट खाकर संजय के साथ रहती है लेकिन फिर भी वह पहले प्यार यानी कि अतुल को ही पाना चाहती है। यहां दीपा और बिन्नी दो अलग मोड़ पर खड़ी होकर भी एक सी लगती है. एक धोखा खाकर पहले प्रेमी से जुड़ी रहना चाहती है और दूसरी धोखा देकर फिर उसी पहले को पाना चाहती है।

गहरे प्रेम और संबंधों के बाद भी कुंज बिन्नी समक्ष 'वी आर मैरिड' कहकर अपने आगामी जीवन के लिए अपनी पत्नी मधु का चुनाव करता है तो शादी जैस बंधन पर एक विश्वास उभर ही आता है। ये सारी कहानियां और इनके पात्र यही बताते हैं कि शादी और पति–पत्नी के संबंधों से मिली तृप्ति ही दोनों के जीवन को पूर्णता से भर देती है बशर्ते उसके बीच किसी तीसरे के होने की सुगबुगाहट न हो।

इन कहानियों में कहीं कोई पात्र जबरन थोपी गई भूमिका में नहीं लगता। सारी स्थितियां, सारी बातें, सारे व्यवहार सहज लगते हैं। कहीं कोई नाटकीयता नहीं. बड़े ही सामान्य तरीके सब कुछ घटित होता चला जाता है। इन प्रेम त्रिकोणों में असहज संबंध भी सहज ही बुन दिए गए हैं। पात्रों का चरित्र परिवेश और सन्दर्भों के साथ ऐसे गढ़ दिया गया है कि कहीं कोई पात्रं नकली अथवा बनावटी नहीं लगता इन कहानियों में कोई विलन नहीं। किसी चरित्र पर आप आक्षेप नहीं कर सकते बल्कि उन पात्रों को, उनकी उलझनों को बहुत देर तक अपने में जीते हुए उनमे उलझते–सुलझते हैं। भीतर भावों का सघन वेग उमड़ता है और बाहर एक चुप्पी–सी छा जाती है। मन्नू जी की प्रेम कहानियां मील के पत्थर की तरह जगह–जगह जीवन के हर मोड़ पर खड़ी हो जाती है और पढने वालो से इस बात का परीक्षण करवा लेती हैं कि आपने अपने प्यार में कहां तक की दूरी तय की है, आपका प्यार किस गहराई तक पहुंचा है. आप चाहे तो मन्नू जी की इन प्रेम कहानियों को अपने प्रेम का मापदंड बना ले और प्रेम में अपनी भावदशा को नापते चले।

इन प्रेम कहानियों पर एक जगह कमलेश्वर जी लिखते हैं कि 'मन्नू का यह प्रेम क्षण मुक्त, संबंध मुक्त, इतिहास मुक्त नहीं है। वह सेक्स मुक्त भी नहीं है वह अपने समग्रता में क्षण, संबंध, इतिहास और सेक्स से युक्त हैं। इन कहानियों के पात्र स्मृति से ओझल हो सकते हैं, पर प्रेम की जटिलतम और कठिनतम स्थितियों को मन्नू ने जिस तरह अभिव्यक्ति दी है, वे प्रसंग लगातार कहीं न कहीं एक विकटतम मानसिक और भावात्मक सत्य के रूप में कौंधते रहे हैं। वे प्रसंग चाहे 'ऊंचाई' कहानी की शिवानी, शिशिर और अतुल के हों, 'यही सच है' कहानी की दीपा, निशीथ और संजय के हों या 'एक बार और' कहानी की बिन्नी, मधु और कुंज के हों।'

मन्नू जी की प्रेम कहानियों में विवाह से पूर्व और विवाहेत्तर संबंधों के प्रेम त्रिकोण तो है ही, लिव–इन–रिलेशन के प्रेम त्रिकोण भी प्रेम के कोणों को समझने में पूरी तरह सहयोगी हुए है। विवाह पूर्व संबंध हो या एक विवाह को तोड़कर दूसरा विवाह कराने वाले विवाहेत्तर प्रेम संबंध इनमे फिर भी प्रेम की एक न एक झलक है लेकिन कुछ संबंधों में प्रेम के नाम पर प्रेम धन को लूट लेने वाले छल–कपट भी कम नहीं हैं। या यूं कहें कि हमारे समाज में इस प्रकार के छल भरे प्रसंग सबसे अधिक हैं. मन्नू जी की प्रेम कहानियों में 'स्त्री–सुबोधिनी' एक ऐसी कहानी है जिसका अध्ययन सबसे ज्यादा जरूरी है। हमारे तथाकथित आधुनिक समाज में डाक्टरों का नर्सों से, प्रोफेसरों का अपनी छात्राओं से, अफसरों का अपनी स्टैनो–सेक्रेटरी से प्रेम हो जाना आम रिवाज है। यह बात बिलकुल सच है कि बॉस से हुए प्यार में उनकी ओर से प्रेम कम और शगल ज्यादा रहता है। जूनियर द्वारा प्रेम में दिखाई गई ईमानदारी अंत तक पहुंचते–पहुंचते अपने बेवकूफ होने का आभास कराती है। ये कहानी इस बात का एहसास दिलाती है कि यदि प्रेम दोनों ओर से बराबर हो तभी वह प्रेम है। एक ही दफ्तर में काम करते हुए बनने वाले प्रेम संबंध ज्यादातर अवसरवादी प्रेम होते हैं। यह अवसर देखकर पनपते हैं। इनका कभी कोई सुखद अंत नहीं होता ऐसे प्रेम की परिणति विवाह तो होती ही नहीं है। विवाह का सपना इसका आधार जरूर हो सकता है। ऐसे प्रेम लिव–इन में रहकर जीवन के अतिरिक्त आनंद लूटने के इरादे से बनाए गए होते हैं। इस तरह के प्रेम में प्रेमिका को अक्सर इस बात का एहसास दिलाया जाता है कि वह आम औरत से कुछ अलग, कुछ विशिष्ट, कुछ ऊंची है। विवाह संबंध में रहने वाली औरत से बहुत ऊंची. वह स्त्री–पुरुष के स्वैच्छिक संबंधों में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने वाली अनूठी औरत है। स्त्री–पुरुष संबंधों को एक नई दिशा देने का दायित्व उसी के कंधों पर है। अगली पीढ़ी अधिक स्वस्थ, अधिक मुक्त होकर संबंध स्थापित कर सके इसके लिए उसे ही पहल करनी है। समाज में अपने प्रेम–संबंध का एक उदहारण रखना है। प्रेम का ऐसा उपजाऊ समाज बनाने के लिए उसे ही खाद बनना है। इस प्रकार अवसरवादी सोच वाले प्रेमी और उसके प्रेम की पहचान बताते हुए लेखिका यह कहकर प्रेमिका को सतर्क भी करती हैं कि इस तरह के प्रेम में खाद बनकर सड़ना स्त्री को ही है क्योंकि पुरुष तो अपने को कभी किसी स्त्री से बांधता ही नहीं। वह तो आसानी से मिले हुए अवसर का भरपूर उपभोग करता है और फिर नए अवसर की तलाश में चलता बनता है।

यदि हम स्त्री की बात करे तो स्त्री के लिए प्रेम अवसर नहीं, ठहराव है। वह केवल प्रेम नहीं चाहती, प्रेम के साथ सम्मान और विश्वास भी चाहती है. उसके लिए प्रेम न तो प्यास है और न प्यास बुझाने का साधन, प्यास बुझाने की प्रक्रिया भी उसके लिए प्यार कतई नहीं है। वह प्रेम को अपने भावों में जीती है। जो पुरुष प्रेम करते हुए स्त्री के भावजगत में गहरे उतरकर उसके अंतर्मन में ठहर गया उसी ने स्त्री और उसके प्रेम को जिया है। शेष तो सब कहानियां है जो जीवन के कई–कई मोड़ों पर बनती–बिगड़ती रहती हैं।

*****